जैन साहित्य एवं मंदिर उपकरण

हमारे यहाँ सभी प्रकार का दिगंबर जैन एवं भारत के सभी प्रमुख धार्मिक संस्थानों का सत साहित्य एवं मंदिर में उपयोग हेतु उपकरण और प्रभावना में बाटने योग्य सामग्री सीमित मूल्य पर उपलब्ध है

(पांडुशिला ,सिंघासन, छत्र, चवर प्रातिहार्य,जाप माला ,मंगल कलश, पूजा बर्तन ,चंदोवा,तोरण ,झारी ,

(शुद्ध चांदी के उपकरण आर्डर पर निर्मित किया जाता है)

नोट:-हमारे यहाँ घरो में उपयोग हेतु ,साधुओ के उपयोग हेतु ,
अनुष्ठानों में उपयोग हेतु शुद्ध घी भी आर्डर पर उपलब्ध कराया जाता है

SOURABH KUMAR JAIN
9993602663
77229 83010
SOURABHJN1989@GMAIL.COM

श्री तत्वार्थसूत्र मंडल विधान

धन्य उमास्वामी गुरुवर...

(तर्ज : रोम रोम से निकले प्रभुवर...)

धन्य उमास्वामी गुरुवर! शिवमार्ग दिखावनहारा...2
कुन्दकुन्द के प्रथम शिष्य, तत्त्वार्थ रचा सुखकारा।
धन्य उमास्वामी गुरुवर ...

सप्त तत्त्व दिखलाये, सब भेद-प्रभेद बताये।
भेद-प्रभेदों में भी शुद्ध अभेद स्वरूप दिखाये।।
जैन न्याय के महा-वृक्ष का बीजभूत सुखकारा।।1।।
धन्य उमास्वामी गुरुवर ...

नय-प्रमाण से जाने, निज वस्तुस्वरूप पिछानें।
पाँच ज्ञान के भेदों में चेतन लक्षण पहचानें।।
पाँच भाव निज तत्त्व जीव के, कहे सुनय व्यवहारा।।2।।
धन्य उमास्वामी गुरुवर ...

जड़-चेतन हम जानें, उत्पाद-ध्रौव्य-व्यय मानें।
सत् लक्षण है सभी द्रव्य का गुण-पर्ययुत् जानें।।
अतः द्रव्य निज का ही कर्ता, पर का नहिं करतारा।।3।।
धन्य उमास्वामी गुरुवर ...

मात्र मंगलाचरण पंक्ति पर, रची आप्तमीमांसा।
अष्टशती अरु अष्टसहस्री हैं अनुपम शुभ टीका।।
राजवार्तिक श्लोकवार्तिक ग्रन्थ, मोह-क्षयकारा।।4।।
धन्य उमास्वामी गुरुवर ...

भव्य जीव सब आओ, मंगल विधान रचवाओ।
पूर्ण ग्रन्थ के स्वाध्याय का, शुभ संकल्प जगाओ।।
धन्य दिवस जब पूर्ण हुआ, मंगल विधान सुखकारा।।5।।
धन्य उमास्वामी गुरुवर ...

श्री तत्त्वार्थसूत्र विधान

मंगलाचरण

(अनुष्टुप्)

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये।।

(हरिगीत : तर्ज – जो राग–द्वेष विकार वर्जित...)

हे मुक्ति–पथ–नायक महा! तुम जानते सब सृष्टि को।
हे कर्म–गिरि–भेदक! नमूँ मैं, तव गुणों की प्राप्ति हो।।

काल त्रय अरु द्रव्य लेश्या काय छह छह जिन कहें।
अस्तिकाय–रु समिति व्रत गति ज्ञान पाँच जिनोक्त हैं।।
पदार्थ नव, चारित्र पाँच प्रकार शिवपथ मूल हैं।
श्रद्धा–प्रतीति–स्पर्श जो बुध करें शुद्ध सुदृष्टि हैं।।

चौबीस जिनवर और गुरुवर गणधरों को नमन कर।
कुन्दकुन्दाचार्य स्वामी समय के दाता प्रवर।।
ग्रन्थ–कर्ता उमास्वामी गृद्धपिच्छ कहें जिन्हें।
गणधरों–सम कार्य करते नमूँ उनके चरण मैं।।

अध्याय दश का ज्ञान हो तत्त्वार्थ का श्रद्धान हो।
चैतन्य में उपवास का फल मिले मुनिवर वच अहो।।
सभी टीकाकार मुनिवर चरण की अब लूँ शरण।
विधान रचना हेतु अब मैं करूँ मंगल आचरण।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

Scanned with CamScanner

पीठिका

(दोहा)

चौबीसों जिन पद युगल, पंच प्रभू सिर नाय।
मोक्षशास्त्र इस ग्रन्थ का, सुगम विधान रचाय।।

(हरिगीतिका)

शुद्धनय से जीव का, वर्णन समय के सार में।
किन्तु नय व्यवहार से, वर्णन किया इस शास्त्र में।।
प्रभो! नय-व्यवहार से, परमार्थ का विज्ञान हो।
दृष्टि में ज्ञायक बसे, व्यवहार का बस ज्ञान हो।

कुन्दकुन्दाचार्य के हैं, शिष्य स्वामि-उमा गुरु।
निर्ग्रन्थ-गुरु के ग्रन्थ पढ़, चैतन्य में विचरण करूँ।।
तत्त्व एवं अर्थ का, श्रद्धान परिणति में बसे।
निर्विकल्प प्रतीति से, आनन्द धारा नित बहे।।

जीव की पहचान भेदों, और भावों से कही।
देह इन्द्रिय योनि अरु त्रय लोक का वर्णन सही।।
सद्भूत नहिं व्यवहार यह, पर अनुपचरित इसे कहें।
परमार्थ समझाने अरे! इस भाँति जिन वर्णन करें।।

बन्ध आस्रव कहे संवर, निर्जरा विस्तार से।
क्योंकि प्रतिपादन कहा, परमार्थ का व्यवहार से।।
अतः इस व्यवहार को, उपचार मात्र सुजान कर।
परमार्थ को भूतार्थ लख, आश्रय करूँ इसका प्रवर।।

इस ग्रन्थ की टीका लिखीं, गम्भीर बहु आचार्य ने।
सर्वार्थसिद्धि राजवार्तिक, श्लोकवार्तिक आदि हैं।।
सिद्धान्त जिनवरकथित, पद्धति-न्याय से वर्णन किये।
हे प्रभो! इस रूप में, अब तुम बसो मेरे हिये।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

Scanned with CamScanner

श्री तत्त्वार्थसूत्र पूजन

स्थापना

(दोहा)

भक्तिभाव से मैं रचूँ, यह संक्षिप्त विधान।
नय-प्रमाण से प्रकट हो, सप्त तत्त्व का ज्ञान।।
स्वाध्याय से ग्रन्थ का, होवे सम्यग्ज्ञान।
स्व-संवेदन ज्ञान में, हो आनन्द महान।।

(मरहठा माधवी : तर्ज - आओ बच्चो तुम्हें सुनायें...)

वन्दन श्री चौबीस जिनेश्वर, विचरें मम श्रद्धान में।
जिनका केवलज्ञान सुशोभित, होता मम श्रुतज्ञान में।।
आओ श्री जिनराज पधारो, मम अन्तर्मुख ज्ञान में।
मम परिणति में सदा विराजो, स्व-संवेदन ज्ञान में।।

तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता श्री गुरुवर, उमास्वामि आचार्य हैं।
पूज्यपाद अकलंक देव, विद्यानन्दि मुनिराज ने-
अति गम्भीर लिखी टीकाएँ, वनवासी निर्ग्रन्थ ने।
भाव सहित उर में धारण कर, विचरूँ मैं शिवपंथ में।।

प्रभो! आज मैं अन्तर्मुख हो, नित्य निरंजन नाथ को।
निरखूँ और निहारूँ निज में, निज परिणति का वास हो।।
दश अध्यायों से शोभित, तत्त्वार्थसूत्र इस ग्रन्थ का।
आह्वानन स्थापन सन्निधि-करण करूँ शिवपन्थ का।।

ॐ ह्रीं महाशास्त्र-श्रीतत्त्वार्थसूत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (इत्याह्वानम्)
ॐ ह्रीं महाशास्त्र-श्रीतत्त्वार्थसूत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (इति स्थापनम्)
ॐ ह्रीं महाशास्त्र-श्रीतत्त्वार्थसूत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (इति सन्निधिकरणम्)

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

Scanned with CamScanner

अष्टक

(वीरछन्द)

चिर मिथ्यात्व महा मल से मेरी परिणति में भव-जंजाल।
सप्त तत्त्व श्रद्धानरूप जल से अब करूँ मोह प्रक्षाल।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पर से सुखी-दुखी मैं होता, यह अनादि दुर्गन्ध रही।
अब सम्यक् प्रतीति बल से प्रभु, चिर कुवासना शीघ्र नशी।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत-विक्षत परिणामों में, एकत्व बुद्धि से दुखी हुआ।
प्रभो! आज अक्षत निजात्म-दर्शन से सुख का बिन्दु चखा।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह अत्यन्त अतृप्त वासना, है अनादि से व्याप रही।।
अब यथार्थ श्रद्धान-सुमन की, गन्ध ज्ञान में प्रकट हुई।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

Scanned with CamScanner

भोगे भोग अनन्त प्रभो! पर, भोग-वासना नहीं मिटी।
चिदानन्द रस स्वाद चखूँ अब, परम तृप्ति की राह मिली।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह-तिमिर से ग्रस्त ज्ञान में, ज्ञान-स्वभाव न भासित हो।
अब यथार्थ श्रद्धान ज्योति में, ज्ञायकभाव प्रकाशित हो।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-द्वेष के कीट पतंगों से, मम परिणति त्रस्त हुई।।
प्रभो! आज चैतन्य-सुरभि की, अनुभूति में मस्त हुई।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या श्रद्धा के फल में प्रभु! दुख अनन्त मैं भोग रहा।
दर्शन-मूल धर्म-तरु के फल में प्रभु! सुख अनन्त देखा।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

Scanned with CamScanner

जड़ वैभव में सुख की मधुर कल्पना वर्त रही जिनराज।
प्रभु! निज वैभव निज में लखकर, पाऊँ निज अनर्घ्य पद आज।।
वीतराग सर्वज्ञ और हित-उपदेशी को करूँ नमन।
अहो! ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र-कर्ता के वन्दूँ युगल-चरण।।

ॐ ह्रीं श्री उमास्वामिविरचित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

(मानव)

दश अध्यायों में गुरुवर, करते तत्त्वों का वर्णन।
नव तत्त्वों की श्रद्धा को कहता व्यवहार सु-दर्शन।।
जो छिपा हुआ भेदों में वह एक रूप है चिन्मय।
उसके अवलम्बन से ही हो मुक्ति वधू से परिणय।।

(सोरठा)

जीव कहे व्यवहार, नव तत्त्वों के भेद को।
नव तत्त्वों में सार, किन्तु शुद्ध चैतन्य ही।।

जिन-शासन जयवन्त, स्याद्वाद से शोभता।
होवे भव का अन्त, जानूँ निज शुद्धात्मा।।

परम-अकर्ता नाथ, मैं ज्ञायक चैतन्य हूँ।
कभी न छूटे साथ, परिणति में निज भाव का।।

पद-अनर्घ्य सुखदाय, यही शुद्ध परमार्थ ही।
चरणन शीश नवाय, अर्पित हैं श्रद्धा-सुमन।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

Scanned with CamScanner

जीव तत्त्व के अन्तर्गत मतिज्ञान आदि पाँच ज्ञान प्ररूपक

* प्रथम अध्याय के लिए अर्घ्य *

(दोहा)

चेतन लक्षण ज्ञान के, भेद अनेक दिखाय।
किन्तु अभेद स्वभाव के, आश्रय से शिव पाय।।

(जोगीरासा)

मति श्रुत अवधि मनःपर्यय अरु केवल भेद कहे हैं।
किन्तु सभी ये सदा समर्पित एक ज्ञान पद में हैं।।
यही ज्ञान पद सारभूत है शिवपथ का अवलम्बन।
हे प्रभु! रत्नत्रय परिणति में ज्ञायक का हो वेदन।।
दर्शन-ज्ञान-चरित्र भेद भी अनुभव में नहिं आवे।
द्रव्य और पर्याय भेद भी अनुभव में मिट जावे।।
भक्तिभावमय अर्घ्य समर्पित कर निर्वांछक होऊँ।
सहज प्रकट रत्नत्रय वैभव शाश्वत सुख नित भोगूँ।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-अध्यायसमन्वित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

जानूँ सकल पदार्थ, नय प्रमाण निक्षेप से।
भासे निज परमार्थ, सुरभित श्रद्धा-सुमन से।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

जीव के पाँच भाव तथा जन्मस्थान आदि प्ररूपक

* द्वितीय अध्याय के लिए अर्घ्य *

(दोहा)

चार भाव से भिन्न है, पावन पंचम भाव।
जन्म-मरण जिसमें नहीं, ज्ञायक एक स्वभाव।।

Scanned with CamScanner

(मरहठा माधवी)

औपशमिक क्षायिक क्षयोपशम औदायिक ये भाव हैं।
प्रकटें चेतन की परिणति में किन्तु कर्म-सापेक्ष हैं।।
पूजित पंचमभाव पारिणामिक तो सहज स्वभाव है।
नित्य अचल ध्रुव की ध्रुव परिणति का नित सहजप्रवाह है।।
पाँचों भावों के हैं त्रेपन भेद बताए ग्रन्थ में।
किन्तु दृष्टि का विषय बताया है अभेद निर्ग्रन्थ ने।।
भक्तिभावमय अर्घ्य समर्पित कर होऊँ निष्काम मैं।
सहज प्रकट रत्नत्रय वैभव नित भोगूँ शिवधाम में।।

ॐ ह्रीं श्री द्वितीय-अध्यायसमन्वित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

त्रैकालिक ध्रुव भाव, पाँच भाव में श्रेष्ठ है।
रमूँ सदा निज भाव, शरणभूत चैतन्य है।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

अधोलोक एवं मध्यलोक स्वरूप प्ररूपक
* तृतीय अध्याय के लिए अर्घ्य *

(दोहा)

निज विस्मृति से प्राप्त हों, नर-नारक पर्याय।
निज दर्शन से शीघ्र हो, शाश्वत शिव पर्याय।।

(वीरछन्द)

मध्य लोक में द्वीप असंख्यों ढाई द्वीप में है नर लोक।
दुर्लभ नर-भव पाकर हे जिन! लखूँ ज्ञान में लोकालोक।।

Scanned with CamScanner

नरकों में भी ज्ञानी की परिणति में बहती सुखरस धार।
हे प्रभु! दुर्लभ नर-तन पाया प्रकटे भेदज्ञान सुखकार।।
प्रभो! अनुभवूँ मात्र ज्ञान को ज्ञेयों से मैं भिन्न स्वरूप।
दर्श ज्ञान चारित्र अर्घ्य अर्पित कर लखूँ अनर्घ्य स्वरूप।।
भेदज्ञान से नरकों में भी ज्ञानी शिवमगचारी है।
अज्ञानी संयोगों को दुख-कारण लख संसारी है।।

ॐ ह्रीं श्री तृतीय-अध्यायसमन्वित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

पाते नर-पर्याय, ढाई द्वीप पर-क्षेत्र में।
अब निज क्षेत्र सुहाय, अर्पित हैं श्रद्धा-सुमन।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

देवगति स्वरूप प्ररूपक

❊ चतुर्थ अध्याय के लिए अर्घ्य ❊

(दोहा)

सुरगति हो शुभभाव से, किन्तु नहीं शिवमार्ग।
दर्श-ज्ञान अरु लीनता, मात्र एक शिवमार्ग।।

(वीरछन्द)

तीव्र शुभाशुभ के फल में सुर नारक में जन्मे यह जीव।
इन भावों अरु गतियों से भी भिन्न रहे चैतन्य सदीव।।
पुण्य उदय से प्राप्त भोग की तृष्णा में दुख सहे अनन्त।
प्रभु! अब सहज अतीद्रिंय सुख की कला प्राप्त करके भव-अंत।।

Scanned with CamScanner

पुण्य-पाप में भेद मानकर भटक रहा है गतियाँ चार।
चारों गतियों में दुख ही दुख यही जिनागम का है सार।।
भेद ज्ञान की कला कुशलता से निरखूँ अब अपना रूप।
दर्श-ज्ञान-चारित्र अर्घ्य अर्पित कर लखूँ अनर्घ्य स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्थ-अध्यायसमन्वित-श्रीतत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

कहते श्री जिनराय, स्वर्गों में भी सुख नहीं।
मिथ्या भाव नशाय, समकित सौरभ महकती।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

अजीव तत्त्व प्ररूपक

* पंचम अध्याय के लिए अर्घ्य *

(दोहा)

पाँच अचेतन द्रव्य को, निज से भिन्न सुजान।
चेतन लक्षण से सदा, हो निज की पहचान।।

(हरिगीतिका)

पाँचों अचेतन द्रव्य भी उत्पाद-व्यय-ध्रुवरूप हैं।
स्वयं के परिणाम के कर्ता सभी सत्-रूप हैं।।
आपने उत्पाद-व्यय-ध्रुव सत्त्व का लक्षण कहा।
अतः श्रद्धा में बसी प्रभु! आपकी सर्वज्ञता।।

निज-भाव का व्यय हो नहीं इसलिए वस्तु नित्य है।
अर्पित-अनर्पित कथन से सब वस्तुओं की सिद्धि है।।

Scanned with CamScanner

अर्घ्य अर्पित कर प्रभो! चैतन्य में दृष्टि रखूँ।
पद-अनर्घ्य स्वरूप निज निष्काम वृत्ति को भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचम-अध्यायसमन्वित-श्रीतत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

नहीं चेतना गन्ध, पाँच अचेतन द्रव्य में।
निज चैतन्य सुगन्ध, महके समकित सुमन में।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

आस्रव तत्त्व प्ररूपक

❊ षष्ठ अध्याय के लिए अर्घ्य ❊

(दोहा)

अशुचि और विपरीत ये, आस्रव हैं दुखरूप।
परम पवित्र निजात्मा, का अनुभव सुखरूप।।

(विधाता : तर्ज - तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

शुभाशुभ के निमित से ही कर्म का आस्रव होता।
महामद मोह पी चेतन स्वयं का होश खो देता।।
आस्रव हैं अनादि से आत्मा भी अनादि से।
स्वयं को ही स्वयं भूला है अज्ञानी अनादि से।।

द्रव्य आस्रव जड़ात्मक है राग चैतन्य की पर्याय।
परस्पर निमित्त-नैमित्तिक भावमय है सकल संसार।।
आस्रव भाव से निज को निहारूँ आज मैं न्यारा।
अर्घ्य अर्पण करूँ जिनवर मिटाऊँ आस्रव सारा।।

ॐ ह्रीं श्री षष्ठ-अध्याय-समन्वितश्रीतत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Scanned with CamScanner

(सोरठा)

सुखमय चेतन भाव, आस्रव तो दुखरूप हैं।
रचूँ निरास्रव भाव, अर्पित हैं श्रद्धा-सुमन।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

व्रतों का स्वरूप, भेद, भावना तथा अतिचार प्ररूपक

* सप्तम अध्याय के लिए अर्घ्य *

(दोहा)

सम्यग्दर्शन पूर्वक, होंय व्रतादिक भाव।
शिवपथ है व्यवहार से, आस्रव दुखमय भाव।।

(रोला)

बारह व्रत के अतीचार कुल साठ कहे हैं।
समकित अरु सामायिक के दश अतीचार हैं।।
निर्मल परिणति के संग ज्ञानी को शुभ होता।
सहज परिणमन निरतिचार सब व्रत का होता।।

आत्मज्ञान बिन क्रिया मात्र हो अज्ञानी को।
निश्चय अरु व्यवहार सहज व्रत हों ज्ञानी को।।
राग-भाव से भिन्न निजातम रूप निहारूँ।
अर्घ्य समर्पित कर जिनवर पर-भाव निवारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सप्तम-अध्यायसमन्वित-श्रीतत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

चारित-निर्मल गन्ध, महके बाह्य-व्रतादि में।
श्रद्धा-सुमन सुगन्ध, अर्पित हैं जिन-चरण में।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

Scanned with CamScanner

बन्ध तत्त्व प्ररूपक

✽ अष्टम अध्याय के लिए अर्घ्य ✽

(दोहा)

बन्ध-भाव दुखरूप हैं, यही बन्ध का ज्ञान।
निज निरखे निर्बन्ध जब, होय बन्ध की हानि।।

(जोगीरासा)

मिथ्या अविरति अरु कषाय परमाद सहित उपयोगा।
सकषायी जीवों को पुद्गल कर्म-बन्ध ही होगा।।
प्रकृति प्रदेश स्थिति अनुभागी द्रव्य-बन्ध बतलाया।
बद्धस्पृष्ट रहित निज आतम चेतनरूप निहारा।।

भाव-बन्ध से दुखी हुआ मैं बन्ध-रूप निज जाना।
मैं चेतन निर्बन्ध स्वरूपी ज्ञायक-भाव न जाना।।
प्रभो! बन्ध से भिन्न सदा निरखूँ निज को चिद्रूपी।
अर्घ्य समर्पित कर निज ध्याऊँ शाश्वत मुक्त स्वरूपी।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टम-अध्यायसमन्वित-श्रीतत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

जीव-कर्म का बन्ध, असद्भूत व्यवहार से।
महके चेतन गन्ध, बन्ध रहित परमार्थ से।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

संवर और निर्जरा तत्त्व प्ररूपक

✽ नवम अध्याय के लिए अर्घ्य ✽

(दोहा)

शुद्धि की उत्पत्ति ही, संवर भाव सुजान।
अनुभव रस में वृद्धि हो, यह निर्जरा महान।।

Scanned with CamScanner

(अवतार : तर्ज – चौबीसों श्री जिन चन्द...)

संवर निर्जर निज भाव चेतन की लहरें।
तप समिति गुप्ति इत्यादि जिन व्यवहार कहें।।
निज में ही हो विश्रान्त चेतन में प्रतपन।
तप अन्तरंग सुखरूप मिटती राग तपन।।

बारह विकल्प तपरूप है व्यवहार कथन।
शुद्धि की वृद्धि स्वरूप तप–परमार्थ वचन।।
यह अर्घ्य समर्पित नाथ निज में ही तपकर।
पाऊँ अनर्घ्य निज नाथ शाश्वत शिव सत्वर।।

ॐ ह्रीं नवम–अध्यायसमन्वित–श्रीतत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

संवर निर्जर भाव, चेतन रस में प्रकट हों।
ध्याऊँ निज ध्रुव भाव, समकित सौरभ महकती।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

मोक्ष तत्त्व प्ररूपक

✻ दशम अध्याय के लिए अर्घ्य ✻

(दोहा)

द्रव्य–भाव–नोकर्म से, रहित अवस्था जान।
अशरीरी आनन्दमय, शाश्वत मोक्ष निधान।।

(मरहठा माधवी)

द्रव्य–भाव नोकर्म रहित शिवपद शाश्वत सुखरूप है।
सदा मुक्त चैतन्य अनादि अनन्त एक ध्रुवरूप है।।

Scanned with CamScanner

बन्ध-मोक्ष औपाधिक या निरुपाधिक चित् परिणाम हैं।
जीव सदा चैतन्य स्वरूपी सहज मुक्त ध्रुवधाम है।।

हुआ कर्मक्षय ऊर्ध्व गमन कर जीव चला लोकान्त में।
अविनाशी शाश्वत सुख भोगे अब वह काल अनन्त में।।
हे जिन! अर्घ्य समर्पित करता पाऊँ शाश्वत धाम मैं।
मिटे मुक्ति पर्याय-कामना हो जाऊँ निष्काम मैं।।

ॐ ह्रीं श्री दशम-अध्यायसमन्वित-तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

नहीं मोक्ष का वेश, निज चैतन्य स्वभाव में।
करूँ निजात्म प्रवेश, अर्पित हैं श्रद्धा-सुमन।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

महाऽर्घ्य

(वीरछन्द)

दश अध्यायों से शोभित, तत्त्वार्थसूत्र यह ग्रन्थ महान।
इसे समझने हेतु करें हम, नय-प्रमाण का सम्यग्ज्ञान।।
सात-तत्त्व के भेदों में है, विलसित चेतन तत्त्व महान।
प्रभो! अर्घ्य अर्पित करता हूँ, पद अनर्घ्य हो शिवसुखदान।।

ॐ ह्रीं श्री तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महाऽर्घ्य

(दोहा)

महाशास्त्र तत्त्वार्थ का, करता हूँ गुणगान।
विषय वस्तु संक्षेप में, किंचित् करूँ बखान।।

Scanned with CamScanner

(मानव)

रत्नत्रय ही शिव पथ है, जो नय-प्रमाण से जाने।
सामान्य ज्ञान के पाँचों, भेदों का रूप पिछाने।।
औदयिक आदि भावों में, गति इन्द्रिय एवं तन में।
चैतन्य-चन्द्र ही चमके, संयोग अचेतन संग में।।1।।

सुर नारक के भेदों अरु, आवास आदि का वर्णन।
सब द्वीप समुद्रों सरिता, पर्वत आदिक का वर्णन।।
यह जीव कहाँ जन्मे अरु, तन छोड़े चतुर्गति में।
चैतन्य-चन्द्र ही चमके, इन पुद्गल संयोगों में।।2।।

सत् लक्षण द्रव्य कहा है, गुण-पर्यायों में विलसे।
उत्पाद-ध्रौव्य-व्यय प्रतिक्षण, प्रत्येक वस्तु में होते।।
आस्रव के कारण एवं, आस्रव के भेद बताये।
चैतन्य-चन्द्र ही चमके, आस्रव घनघोर घटा में।।3।।

समकित एवं बारह व्रत, सामायिक के बतलाये।
अतिचार सभी के सत्तर, शुभ आस्रव भाव दिखाये।।
चारों प्रकार का बन्धन, दुखमय सद्गुरु समझायें।
चैतन्य-चन्द्र ही चमके, आस्रव बन्धन के तम में।।4।।
संवर-निर्जरा तत्त्व के, भी भेद-प्रभेद कहे हैं।
बाईस परिषह चारों, ध्यानों के भेद कहे हैं।।
मुक्ति-स्वरूप ऊरध-गति, सिद्धों के भेद बताये।
चैतन्य-चन्द्र ही चमके, बन्धन मुक्ति परिणति में।।5।।

(दोहा)

उमास्वामि मुनिराज ने, दिया तत्त्व का ज्ञान।
अर्घ्य समर्पित मैं करूँ, पाऊँ शाश्वत धाम।।

ॐ ह्रीं श्री तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय समुच्चयमहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Scanned with CamScanner

जयमाला

(दोहा)

जो श्री जिनमुख-कमल का, वाहन है अभिराम।
दो नय से सबकुछ कहे, वाणी उसे प्रणाम।।

(वीरछन्द)

गुणभूषण गणधर से विरचित श्रुतधर परम्परा से व्यक्त।
परमागम के अर्थ-कथन में मन्द बुद्धि हम तो असमर्थ।।
इष्ट प्राप्ति होती सुबोध से, बोध शास्त्र से होता है।
और सुशास्त्रों का उद्भव भी, आप्त पुरुष से होता है।।1।।

अतः ज्ञानियों द्वारा पूज्य सदा, होते हैं आप्त प्रभो।
किया हुआ उपकार कभी भी, नहीं भूलते सज्जन जो।।
जो अत्यंत मनोहर शुद्ध तथा शिवपथ के कारण हैं।
भव्यों के कर्णों को अमृत दावानल को जल-सम हैं।।2।।

जैन योगियों द्वारा वन्द्य सदा ऐसे जिनराज वचन।
मन-वच-तन से नितप्रति करता मैं उन वचनों को वन्दन।।
भक्त अमर नत मुकुट रत्न से पूज्य चरण वे वीर जिनेश।
जन्म मृत्यु अरु जरा विनाशक देते अघ नाशक उपदेश।।3।।

महावीर तीर्थाधिनाथ वच सन्त जिसे उर में धरते।
सत्य शील नौका द्वारा वे पार भवोदधि को पाते।।*4।।

(दोहा)

पद्मप्रभमल मुनि करें, जिनवर का गुणगान।
अर्घ्य समर्पित मैं करूँ, पाऊँ शाश्वत धाम।।

ॐ ह्रीं श्री तत्त्वार्थसूत्रग्रन्थाय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

* नियमसार कलश2,5,15 एवं 61 का पद्यानुवाद

Scanned with CamScanner

अन्तिम प्रशस्ति

(दोहा)

जिन गुरु जिनश्रुत भक्ति से, प्रेरित हुआ विधान।
पढ़ें सुनें भविजन सदा, पावें पद निर्वाण।।
भाव-द्रव्य की दृष्टि से, यदि हो कोई भूल।
ध्यानाकर्षण बुध करें, शीघ्र लहूँ भव-कूल।।
भक्तिभाव से रच गया, यह संक्षिप्त विधान।
व्यय हो पूर्ण विकार का, हों निर्मल परिणाम।।
यथा अकर्ता हैं गुरु, उमास्वामि आचार्य।
मुझमें भी कर्तृत्व का, लेश न होय विकार।।
इस रचना के काल में, ज्ञात और अज्ञात।
हुए सभी अपराध जो, क्षमा करें जिनराज।।
पंच प्रभू जयवन्त हों, जिनशासन जयवन्त।
श्रीजिन-चरण-प्रसाद से, हो विकल्प का अन्त।।
यहाँ मात्र संक्षेप में, कहा ग्रन्थ का सार।
इस विधान के रूप में, भावों का विस्तार।।
किन्तु पूर्ण इस ग्रन्थ का, है विधान कर्तव्य।
परिचय हो सम्पूर्ण का, करें सुनिश्चित भव्य।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

जाप्य मन्त्र – ॐ ह्रीं श्री सप्ततत्त्वप्रतिपादक-तत्त्वार्थसूत्राय नमः।

Scanned with CamScanner

सत् तत्त्व प्रकाशनहारा...

तत्त्वार्थ सूत्र यह ग्रन्थ, मुक्ति का पन्थ, जगत हितकारा।
सत् तत्त्व प्रकाशनहारा।।

श्री कुन्द मुनि के शिष्य हुए, आचार्य उमास्वामी प्रकटे।
यह मोक्षमार्ग शुभ ग्रन्थ रचा सुखकारा, सत् तत्त्व प्रकाशनहारा।
तत्त्वार्थ सूत्र यह ग्रन्थ...।

यह सप्त तत्त्व को दिखलाता, सब भेद प्रभेद सुविख्याता।
उपयोगमयी चैतन्य प्रकाशनहारा, सत् तत्त्व प्रकाशनहारा।
तत्त्वार्थ सूत्र यह ग्रन्थ...।

हम सप्त तत्त्व श्रद्धान करें, उसमें भूतार्थ स्वभाव लखें।
हो निर्विकल्प श्रद्धा निश्चय शिव-द्वारा, सत् तत्त्व प्रकाशनहारा।
तत्त्वार्थ सूत्र यह ग्रन्थ...।

जो भेद रूप श्रद्धान कहा, वह समकित का व्यवहार कहा।
यह निश्चय समकित का जानो सहचारा, सत् तत्त्व प्रकाशनहारा।
तत्त्वार्थ सूत्र यह ग्रन्थ...।

वन्दन कर वीर जिनेश्वर को, मुनि कुन्द-उमास्वामी गुरु को।
मंगलमय हुआ विधान जगत-हितकारा, सत् तत्त्व प्रकाशनहारा।
तत्त्वार्थ सूत्र यह ग्रन्थ...।

Scanned with CamScanner

शान्ति पाठ एवं क्षमापना

(हरिगीतका)

पर द्रव्य में एकत्व अरु कर्तृत्व के अभिप्राय से।
आकुलित हूँ चिरकाल से नहिं शान्ति पर की आश से।।
राग की ज्वाला निरंतर जल रही पर्याय में।
विकट भव-वन में भ्रमा हूँ विषय-सुख की चाह में।।1।।

नासाग्र दृष्टि शान्त मुद्रा आज लखकर आपकी।
सहज ही सब विलय हों अब वासनाएँ पाप की।।
मैं शान्ति का हूँ पिण्ड आनन्दकन्द ज्ञायक भाव हूँ।
प्रभु-दर्श कर जानूँ स्वयं को मात्र चिन्मय भाव हूँ।।2।।

मैं स्वयं शान्तिस्वरूप हूँ पर्याय में भी शान्ति हो।
श्रद्धान हो सद्ज्ञान हो किंचित् नहीं कुछ भ्रान्ति हो।।
हे नाथ! अब मैं आपके ही चरण-पथ पर बढ़ चलूँ।
आप-सम निज रूप लखकर आप-सी वृत्ति लहूँ।।3।।

सर्व जिनवर शान्तिदायक शान्ति-निर्झर हैं स्वयं।
इस शान्ति-निर्झर में नहायें यही भाते भाव हम।।
अज्ञान वश अपराध प्रभु! जो ज्ञात या अज्ञात हैं।
करिए क्षमा जिनराजजी अब नशें सब भवताप हैं।।4।।

(दोहा)

पूजन विधि सर्जित हुई, भक्तिभाव में नाथ।
किन्तु विसर्जित अब करूँ, कभी न बिछुड़े साथ।।
करूँ विसर्जन मैं अतः, क्षमा चाहता नाथ।
दर्शन-ज्ञान-चरित्र में, सदा रहे तव साथ।।

(नौ बार णमोकार मंत्र के द्वारा पंच परमेष्ठी का स्मरण करें।)

मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्।।
सर्वमंगल-मांगल्यं सर्वकल्याणकारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम्।।

Scanned with CamScanner